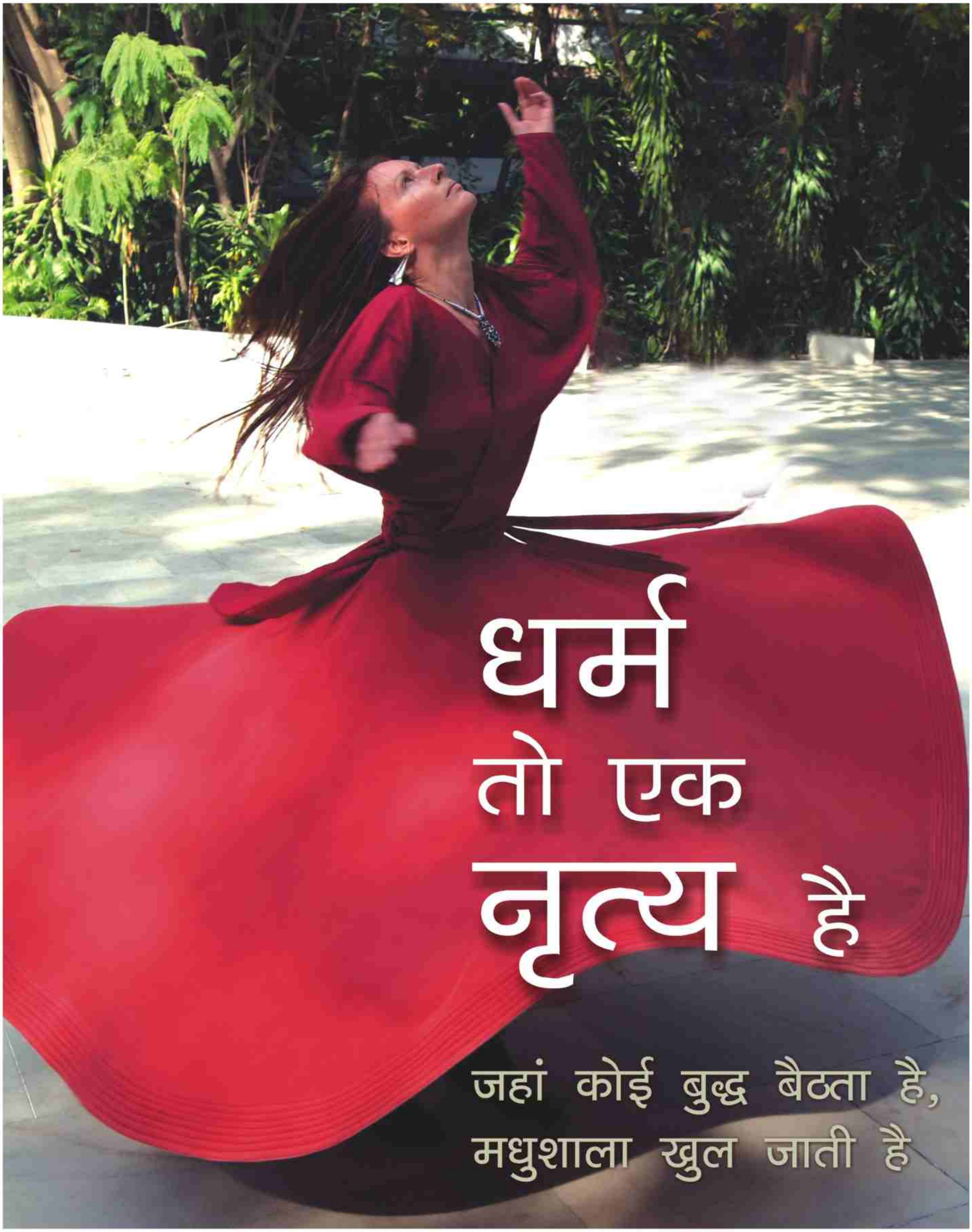

धर्म तो एक नृत्य है

जहां कोई बुद्ध बैठता है, मधुशाला खुल जाती है

यह जो परमात्मा की खोज की कथा है, यह जारी रहेगी, जब तक परमात्मा खोज न लिया जाये। लेकिन परमात्मा की खोज तो व्यक्तिगत होती है; कोई एक खोज पाता है। जो खोज लेता है, उसकी खोज समाप्त हो जाती है। लेकिन और हैं अनेक-अनेक, जो अंधेरे में भटकते हैं, उनकी खोज तो जारी रहेगी।

धर्म तब तक रहेगा पृथ्वी पर, जब तक एक भी आदमी सोया हुआ है, जब तक सभी नहीं जाग गये। जब तक सभी के दीये नहीं जल गये।

ऐ अहले-खिरद! मुख्तार हो तुम, तामीर करो जिंदां लेकिन

हे बुद्धिमान लोगो, हे पंडितो! ऐ अहले-खिरद! जिनका भरोसा बुद्धि पर है, तर्क पर है...

ऐ अहले-खिरद! मुख्तार हो तुम, तामीर करो जिंदां लेकिन

बनाते रहो तुम शास्त्रों की दीवालें, खड़े करते रहो शब्दों के कारागृह, ढालते रहो सिद्धांतों की जंजीरें।

ऐ अहले-खिरद! मुख्तार हो तुम, तामीर करो जिंदां लेकिन

ऐ अहले-खिरद! मुख्तार हो तुम, तामीर करो जिंदां लेकिन

खुद रक्स करेंगी दीवारें, दीवाने बंद नहीं होंगे।

लेकिन जिन्हें प्रभु की पुकार सुनाई पड़ गयी वे तो दीवालों के भीतर भी नाचने लगेंगे। उनके साथ तो कारागृह की दीवारें भी नाचने लगेंगी। और कितने ही तुम सिद्धांत बनाओ, इस पृथ्वी से तुम प्रेमी पागलों को मिटा न सकोगे। क्योंकि कोई सिद्धांत तृप्ति देता नहीं। सिद्धांत ऊपर-ऊपर रह जाता है, प्राण उससे भीगते नहीं। सिद्धांत सिर में गूंजता रह जाता है, आत्मा उससे अछूती रह जाती है।

ऐ अहले-खिरद! मुख्तार हो तुम, तामीर करो जिंदां लेकिन

खुद रक्स करेंगी दीवारें, दीवाने बंद नहीं होंगे।

कितने सिद्धांतों के जेल खड़े कर दिये गये हैं—हिंदू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, जैन बौद्ध, सिक्ख। ये सब कारागृह हैं। मंदिरों के नाम पर जंजीरें ढालने के कारखाने बने हैं। मस्जिदों में तुम्हारी गुलामी ढाली जा रही है। पर फिर भी प्रभु के प्यारे इन सारी जंजीरों के बीच भी नाच उठते हैं। उनके साथ जंजीरें भी पायल की झनकार बन जाती हैं। नाच आये तो जंजीर भी पायल बन जाती है, नाच न आता हो तो पायल भी जंजीर है। नाच आये तो कारागृह भी नृत्यशाला है, नाच न आता हो तो नृत्यशाला में बैठकर भी क्या करोगे? पीना आता हो तो तुम जो पी लो वही मधु है; और पीना न आता हो तो अमृत की धार भी बरसती रहे तो तुम्हारे किस काम की?

यह लाला-ओ-गुल, माहो-अंजुम मुंह नोच न लें वाइज़ तेरा!

ये फूल, लाला-ओ-गुल, ये माहो-अंजुम, ये सूरज, ये चांद-तारे...हे तथाकथित बुद्धिमान, कहीं तेरा मुंह न नोच लें। ऐ पंडित, कहीं तुझे भूमि की धूल न चटा दें। क्योंकि तू जो भी कर रहा है वह सौंदर्य के विपरीत है। तू जो भी कर रहा है वह चांद-तारों के महोत्सव के विपरीत है।

यह पृथ्वी अंधविश्वास के अंधेरे से भरी है। और अंधविश्वास इतना प्राचीन है कि ऐसा लगता है कि अंधविश्वास ही जीवन है। ईश्वर को तुम मानते हो तो अंधविश्वासी हो। ईश्वर को जानना होगा, मानने से कुछ काम नहीं चलेगा। मानना बड़ी सस्ती बात है

रूपोश हकीकत है जब तक,
अफसाने बंद नहीं होंगे
इसरारे-हरम आबाद रहें जब तक,
अफसाने बंद नहीं होंगे।
ऐ अहले-खिरद! मुख्तार हो तुम,
तामीर करो जिंदां लेकिन
खुद रक्स करेंगी दीवारें,
दीवाने बंद नहीं होंगे।
यह लाला-ओ-गुल,
माहो-अंजुम मुंह नोच न लें वाइज़ तेरा
मैखाने बंद नहीं होते,
मैखाने बंद नहीं होंगे।
खुद शमए-रकीं बन जायेंगे,
हंस-हंसकर जल जाने के लिए
औहाम के जुल्मतखानों में,
परवाने बंद नहीं होंगे।
यह तंज़ो-मलामत कुछ भी नहीं
जुज़ हर्फे मुहब्बत कुछ भी नहीं
दुनिया है 'रविश' और दुनिया
के अफसाने बंद होंगे।
परमात्मा जब तक छिपा है,
तब तक उसे उघाड़ने वाले लोग पैदा
होते रहेंगे।
रूपोश हकीकत है जब तक,
अफसाने बंद नहीं होंगे।
जब तक उस प्यारे के चेहरे पर पर्दा है,
तब तक राम की चर्चा चलेगी, तब तक
प्रार्थना के गीत जगेंगे।
रूपोश हकीकत है जब तक,
अफसाने बंद नहीं होंगे
इसरारे-हरम आबाद रहें जब तक,
अफसाने बंद नहीं होंगे।

कितने सिद्धांतों के जेल खड़े कर दिये गये हैं—हिंदू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, जैन बौद्ध, सिक्ख। ये सब कारागृह हैं। मंदिरों के नाम पर जंजीरें ढालने के कारखाने बने हैं। मस्जिदों में तुम्हारी गुलामी ढाली जा रही है। पर फिर भी प्रभु के प्यारे इन सारी जंजीरों के बीच भी नाच उठते हैं

पंडितों ने बड़ी उदास धारणाएं मनुष्य को दी हैं। उन उदास धारणाओं में फूल नहीं खिलते, उन उदास धारणाओं में कब्रों की दुर्गंध आती है। उन उदास धारणाओं में चांद-तारे नहीं चमकते, उन उदास धारणाओं में गहन अंधकार है।

इसलिए सारी मनुष्य-जाति धार्मिक मालूम होती है, फिर भी धर्म कहां? धर्म होता तो उत्सव होता। तो लोगों के चेहरों पर फूल खिलते, कि उनकी आंखों में चांद-तारे होते, कि उनके हृदय में वीणा बजती, कि उनके जीवन में एक नृत्य होता। कहां है नृत्य, कहां है चमकती हुई आंखें? कहां है नाचते हुए लोग? कहां है रस-भरी आत्माएं? और कहते हैं परमात्मा रस है, रसो वै सः! परमात्मा रस है, मगर तुम्हारे महात्मा बड़े विरस हैं। परमात्मा से तुम्हें जिन्होंने तोड़ दिया है, वे तुम्हारे महात्मा हैं। अस्तित्व के बीच और तुम्हारे बीच जो दीवार बनकर खड़े हो गये हैं, चीन की दीवाल बनकर खड़े हो गये हैं, वे तुम्हारे तथाकथित पंडित-पुरोहित हैं। और जब तक कोई व्यक्ति पंडित-पुरोहितों से मुक्त नहीं होता तब तक बुद्धि से मुक्त नहीं हो पाता। और अभागा है वह आदमी जो बुद्धि में ही जी लेता है और बुद्धि में ही मर जाता है। उसे पता ही नहीं चलता जीवन का राज। उसे जीवन के रहस्यों का कोई बोध नहीं होता।

यह लाला-ओ-गुल, माहो अंजुम मुंह नोच न लें वाइज़ तेरा
मैखाने बंद नहीं होते, मैखाने बंद नहीं होंगे।

यद्यपि तुम करते रहो गुहार, तुम मचाते रहो पुकार, लेकिन कहीं न कहीं कोई मैखाना पैदा हो जाता है। जहां कोई गोरख पैदा हुआ, वहां मैखाना पैदा हुआ। जहां कोई कबीर उठा वहां मैखाना उठा। जहां कोई जीसस चला वहां मधुशाला चली। बुद्ध जहां बैठे, वहीं महोत्सव होगा।

मैखाने बंद नहीं होते, मैखाने बंद नहीं होंगे।

यद्यपि जहां-जहां मैखाने बनते हैं, जल्दी ही वहां मधुशालाएं तो समाप्त हो जाती हैं, वही मंदिर और मस्जिद खड़े हो जाते हैं। बुद्ध के पास तो एक मधुर रस बरस रहा है, लेकिन फिर आते हैं बौद्ध पंडित और उनकी जमात, मधुशाला जल्दी ही एक उदास मंदिर बन जाती है। नृत्य जल्दी ही क्रिया-कांड हो जाते हैं। हृदय से उठे हुए उच्छवास जल्दी ही औपचारिक प्रार्थनाएं बन जाते हैं। जहां जीवंत सत्य का आविर्भाव होता था, वहां अब सत्य के संबंध में चर्चा होती है।

ऐसा ही जीसस के साथ होता, ऐसा ही कृष्ण के साथ होता, ऐसा ही सभी सदगुरुओं के साथ हुआ है। कृष्ण के मंदिर तक में अब बांसुरी कहां बजती है? कृष्ण के मंदिर तक में अब ढोलक पर थाप कहां पड़ती है? कुछ अजीब-सा जाल है आदमी का, आदमी मुक्तिदाताओं से भी अपनी अमुक्ति खोज लेता है। मगर सौभाग्य है एक कि हमारे सारे आयोजन के बावजूद, हमारी सारी व्यवस्था, बंदोबस्त के बावजूद, कोई-न-कोई खिल उठता है, कहीं कोई कमल खिल जाता है, कहीं कोई सुवास उड़ने लगती है आकाश की तरफ, कहीं पूजा के स्वर फिर सुनाई पड़ते हैं, कहीं फिर जीवन अपनी मस्ती में आ जाता है!

मैखाने बंद नहीं होते, मैखाने बंद नहीं होंगे
खुद शमए-यकीं बन जायेंगे, हंस-हंसकर जल जाने के लिए
औहाम के जुल्मतखानों में, परवाने बंद नहीं होंगे।

अच्छा है कि परवाने अंधविश्वासों के अंधेरे में बंद नहीं होते; वे तो जल जाने के लिए आतुर होते हैं। और अगर शमाएं न मिलें तो वे खुद ही शमाएं बन जाते हैं। परवाने ही शमाएं बन जायेंगे अगर शमाएं न मिलें। लेकिन परवाने अंधविश्वास के अंधेरों में बंद नहीं होते।

यह पृथ्वी अंधविश्वास के अंधेरे से भरी है। और अंधविश्वास इतना प्राचीन है कि ऐसा लगता है कि अंधविश्वास ही जीवन है। ईश्वर को तुम मानते हो तो अंधविश्वासी हो। ईश्वर को जानना होगा, मानने से कुछ काम नहीं चलेगा। मानना बड़ी सस्ती बात है। मानना बिलकुल ही दो कौड़ी की बात है। जो मानता है वह अधार्मिक है। जानना होगा, जानने से कम में काम नहीं होगा। लेकिन जानने की हिम्मत जुटानी पड़ती है। जानने के लिए तो परवाने को शमा बन जाना होता है। और जानने के लिए तो अपने प्राणों की आहुति देनी होती है। जानने के लिए तो दांव पर लगाना होता है जीवन को।

धर्म कोई कुतूहल नहीं है, धर्म कोई खाज की खुजलाहट नहीं है—धर्म है प्राणों की बाजी। इसलिए थोड़े से साहसी लोग ही धार्मिक हो पाते हैं। धर्म भयभीतों के लिए नहीं है, कायरों के लिए नहीं है। कायर तो भगोड़े हो जाते हैं। धर्म तो उनके लिए है, जो जीवन के युद्ध में, जीवन की चुनौती को, उसकी समग्रता में स्वीकार करते हैं। जो जीवन को जीते हैं, पूर्णता से जीते हैं। जो भागते नहीं। जो डरे हुए नहीं हैं। जो कंपे हुए नहीं हैं। जो पैर जमाकर जीवन में संघर्ष लेते हैं। उसी संघर्ष से आत्मा का जन्म होता है। उन्हीं चुनौतियों में आत्मा पकती है, सबल होती है।

—ओशो

मरौ हे जोगी मरौ

प्रवचन नं. 5 से संकलित

(पूरा प्रवचन टेप पर उपलब्ध है)